International Journal of Sanskrit Research 2022; 8(1): 23-25

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(1): 23-25
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 19-11-2021
Accepted: 21-12-2021

डॉ. अमिता रेढू
सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, सन्तपुरा
यमुनानगर, हरियाणा, भारत

Corresponding Author:
डॉ. अमिता रेढू
सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, सन्तपुरा
यमुनानगर, हरियाणा, भारत

आयुर्वेद का चिकित्सा क्षेत्र में योगदान

डॉ. अमिता रेढू

सारांश
प्राचीन काल में तो आयुर्वेद का प्रसार यूरोप और एशिया में हुआ ही, मध्यकाल में इनका पुनः प्रवेश हुआ। समस्त विश्व की चिकित्सा पद्धतियों पर आयुर्वेद का प्रभाव व्याप्त था। सुमेरी, बाबुली और आसुर चिकित्सा पर तो उसकी पूरी छाप थी ही, यूनानी दर्शन और चिकित्सा दोनों को प्रभावित कर उसने आधुनिक चिकित्सा की नई नींव डाली। मोनियर ने अपनी संस्कृत–अंग्रेजी डिक्शनरी की भूमिका में लिखा है कि प्राचीन काल में यूरोप की उन्नति के बहुत पूर्व ही भारत ने ज्योतिष गणना विज्ञान एवं चिकित्सा आदि में उन्नति कर ली थी। जिस मिस्र को यूनान का गुरु कहा जाता है उसकी चिकित्सा में जो कुछ है वह आयुर्वेद की ही देन है। पाश्चात्य आधुनिक निदान एवं चिकित्सा की विधियों और औषधियों का समावेश अब आयुर्वेदीय शिक्षा में भी प्रारम्भ हो गया है। जिससे नवीन स्नातक एलोपैथी विधियों की जानकारी प्राप्त करने लगे हैं तथा साथ ही अनुसंधान कार्यों में भी उनकी रुचि बढ़ी है।

मुख्य शब्दः वनस्पति, ओषधि, आयुर्वेदए चिकित्सा, सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान, विज्ञान

भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता का पूरा–पूरा ज्ञान कराने वाला एकमात्र वैदिक वाङ्मय ही है। संस्कृति, साहित्य, ज्ञान विज्ञान तथा अन्य विषयों की तरह इसमें आयुर्वेद का भी वर्णन प्रारम्भिक काल से ही है। आयुर्वेद अनादि शाश्वत शास्त्र है ब्रह्मा ने भी इसका स्मरण ही किया 'ब्रह्मा स्मृत्वायुषो वेदम्'।[1] आयुर्वेद का मूल उद्देश्य स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगियों को निरोग कर उन्हें उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करना है। इस शास्त्र के तीन आधार–स्तम्भ हैं – हेतु, लिंग तथा औषध। इन तीनों विषयों का समुचित ज्ञान मनुष्य को योग्य चिकित्सक बना देता है। चरक संहिता में लिखा है –

> हेतुलिङ्गौषधज्ञानं स्वस्थातुरपरायणम्।
> त्रिसूत्रं शाश्वतं पुण्यं बुबुधे यं पितामहः।।[2]

ब्रह्मा के मुख से मुखरित यह आयुर्वेद सृष्टि के साथ–साथ चलता हुआ अक्षुण्ण स्वास्थय परम्परा की रक्षा कर रहा है। मानव सृष्टि से पूर्व स्वयंभू ब्रह्मा द्वारा जिस चिकित्सा विज्ञान का प्रादुर्भाव किया जा चुका था वह विभिन्न माध्यमों द्वारा विश्व के प्रत्येक भाग में प्रसारित हुआ। विश्व की प्राचीन एवं नवीन सभी चिकित्सा पद्धतियों में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से आयुर्वेद का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। सुमेरियन, बेबीलोनियन, यूनानी चिकित्सा एवं दर्शन पर भी आयुर्वेद का प्रभाव पड़ा। भारत से यूनान एवं मिश्र के माध्यम से यूरोप में इसके सिद्धान्त एवं प्रयोगों से सहायता लेकर यूनानी–तिब्बत एवं एलौपैथिक का जन्म हुआ – ऐसा कुछ इतिहासविद् मानते हैं। शल्य के अनेक प्रयोग एवं सिद्धान्त साक्षात् रूप से भी अन्य चिकित्सा पद्धतियों में आये। जो भी यात्री यहाँ आए एवं जिन सम्राटों ने भारत पर आक्रमण किए वे सभी यहाँ की चिकित्सा से प्रभावित होकर चिकित्सा विधि, द्रव्य एवं पौधों को भी साथ ले गए। कुछ देशों में भारत के प्राचीन व्यापार सम्बन्ध के कारण भी आयुर्वेद का देशान्तर में प्रसार हुआ।

प्राचीन काल में तो आयुर्वेद का प्रसार यूरोप और एशिया में हुआ ही, मध्यकाल में इनका पुनः प्रवेश हुआ। भारतीय औषधियों का निर्यात बहुतायत में होने लगा। इस प्रकार समस्त विश्व की चिकित्सा पद्धतियों पर आयुर्वेद का प्रभाव व्याप्त था। सुमेरी, बाबुली और आसुर चिकित्सा पर तो उसकी पूरी छाप थी ही, यूनानी दर्शन और चिकित्सा दोनों को प्रभावित कर उसने आधुनिक चिकित्सा की नई नींव डाली। मोनियर ने अपनी संस्कृत–अंग्रेजी डिक्शनरी की भूमिका में लिखा है कि प्राचीन काल में यूरोप की उन्नति के बहुत पूर्व ही भारत ने ज्योतिष गणना विज्ञान एवं चिकित्सा आदि में उन्नति कर ली थी। उसने लिखा है कि सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान, विज्ञान आदि का सूर्य सदा पूर्व से ही निकलता रहा है। जिस मिस्र को यूनान का गुरु कहा जाता है उसकी चिकित्सा में जो कुछ है वह आयुर्वेद की

ही देन है। संस्कृति एवं धार्मिक भावना भारतीय सिद्धान्तों से ओत–प्रोत है। यहाँ आने वाले व्यापारी, आक्रमणकारी एवं राजदूत भी यहां की चिकित्सा कौशल से प्रभावित होकर आयुर्वेदिक ग्रन्थों को एवं चिकित्सकों को साथ ले गए तथा अपनी–अपनी भाषाओं में आयुर्वेद ग्रन्थों का अनुवाद करवाया।[3]

एलोपैथी के जनक 'हिप्पोक्रेटिस' पर भी भारतीय चिकित्सा पद्धति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर है। 'हिप्पोक्रेटिस' को पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्र का जनक कहा जाता है। पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति का इतिहास पाँच सौ वर्ष से प्राचीन नहीं है। अनेक विद्वानों का मत है कि हिप्पोक्रेटिस ने चिकित्सा सम्बन्धी ज्ञान पाइथागोरस से प्राप्त किया था एवं इसका नवीन रूप में आगे प्रसार किया। भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने यह निर्णय लिया कि मूल रूप से पाइथागोरस भारतीय ब्राह्मण–विद्वानों से प्रभावित था। पोकाक नामक विद्वान् ने पाइथोगोरस को वहाँ का बुद्ध गुरु सिद्ध किया है। पुथ् गोरस् शब्द बुद्ध गुरु का ही अपभ्रंश प्रतीत होता है। पाइथागोरस को भारतीय बुद्ध गुरुओं से आयुर्वेद के जो योग प्राप्त थे उनका प्रचार यूनान में भी किया था। पाइथागोरस के समकालीन अनेक विद्वानों ने भारत की यात्रा की थी और यहाँ के ज्ञान की शाखाओं का अध्ययन कर यूनान ले गए थे। मानव प्रकृति निर्माण विषय में भी पाइथागोरस के विचार को अरस्तु नामक विद्वान ने भारतीय धारणाएँ सिद्ध किया है। यही नहीं पुनर्जन्म का सिद्धान्त भी भारतीय है। इसके अतिरिक्त गणित सम्बन्धी जो थ्योरम पाइथागोरस के नाम से प्रसिद्ध है, वह किसी त्रिभुज के दो भुजाओं पर बने हुए वर्ग का योग कर्ण पर बने हुए वर्ग के बराबर होता है, लगभग छठी शताब्दी ई.पू. भारतीय गणितज्ञों को इसका सिद्धान्त ज्ञात था।[4] निश्चित ही पाइथागोरस ने इन विषयों की भारत से प्रेरणा ली थी और उसी के अनुयायी हिप्पोक्रेटिस ने भी परम्परागत भारतीय ज्ञान विज्ञान का अध्ययन किया था।

हिप्पोक्रेटिस ने पंचमहाभूतों का उल्लेख किया। इनमें चार महाभूतों के योगदान पर विशेष बल दिया गया है। इसका उल्लेख 'आर एन्सिएन्ट मेडिसिन' में आया है। दोषों में कफ, रक्त, पित्त और जल का उल्लेख है जिनका सम्बन्ध क्रमशः सिर, हृदय, पित्ताशय एवं प्लीहा से माना है। इसी प्रकार दोषों की समानता एवं विषमता से रोग आरोग्य का प्रमुख कारण बताया है। अजीर्ण से आमोत्पत्ति के सिद्धान्त का भी उल्लेख किया। ये सभी सिद्धान्त आयुर्वेद के सिद्धान्त का ही विकृत रूप है। सुश्रुत में भी चार दोषों का स्पष्ट रूप से वर्णन आया है।

नते देहः कफास्ति न पित्तान्न च मारुतात्।
शोणितादपि वा नित्यं देह एतैस्तु धार्यते।।[5]

इन सब तथ्यों से सिद्ध होता है कि पाश्चात्य चिकित्सा विज्ञान के पिता की चिकित्साविद्या पूर्ण रूप से भारतीय परम्परा से प्रभावित रही है। भारतीय संस्कृति विश्व की संस्कृतियों में प्राचीनतम है। इस भारतीय ज्ञान विषय का अधिग्रहण सभी ने न्यूनाधिक मात्रा में अवश्य किया है। एक देश के ज्ञान विज्ञान को अन्य देशों तक फैलाने में यात्राओं, विश्वविद्यालयों, आक्रमण एवं यात्रियों आदि का विशेष स्थान रहा है। भारत में भी बहुत से विदेशी आए एवं भारतीय विद्वान भी विदेश गए। इस कारण भारतीय विज्ञान एवं संस्कृति की विदेशों में अधिग्रहण किया गया। शायद ही कोई ऐसा देश होगा जो भारतीय विद्याओं एवं संस्कृति से अपरिचित हो।

यूनान सम्राट सिकन्दर द्वारा दिग्विजय हेतु भारत में आने के साथ अनेक विद्वान, शिल्पकार एवं हकीम भी भारत आए थे। इतिहासकारों का मत है कि सिकन्दर की सेना में यूनानी विषचिकित्सक नहीं थे। अतः सर्प काटने पर भारतीय चिकित्सकों को विष दूर करने हेतु बुलाया था तथा भारत लौटते समय बहुत से विद्वान एवं चिकित्सक भी अपने साथ ले गया तथा जिनमें कल्याण नामक वैद्य का विशेष उल्लेख मिलता है जिसे यूनान में कोलोनस नाम से भी जाना जाता है।[6] सिकन्दर के समय में तक्षशिला, काशी, उज्जयिनी एवं विदर्भ आदि नगरों में विद्याओं के केन्द्र थे। तक्षशिला समस्त एशिया में शिक्षा के क्षेत्र में सर्वोत्तम विश्वविद्यालय था। यहाँ सम्पूर्ण कला एवं विज्ञान के साथ सैनिक शिक्षा एवं आयुर्वेद अध्ययन करने वाले देश एवं विदेश से आए हुए विद्यार्थियों का बहुत बड़ा समूह था। चिकित्सा विज्ञान के विषय में बहुत प्रसिद्धि थी।[7]

अंग्रेजों के भारत को पराधीन बना लेने के पश्चात् धीरे–धीरे आयुर्वेद का क्रमिक ह्रास होता गया। प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धति का स्थान एलोपैथी ने ले लिया। अंग्रेज भारतीय संस्कृति एवं भारतीय चिकित्सा एवं शिक्षा पद्धति को नष्ट करने का हर संभव प्रयास करने लगे और उन्हें अपने इस कार्य में सफलता भी प्राप्त हुई। किन्तु अठाहरवीं और उन्नीसवीं शती में आयुर्वेद ग्रन्थों के सम्पादक एवं लेखक का क्रमिक विकास बढ़ता ही गया। इसका कारण विशेष रूप से यही है कि जिस आयुर्वेद को वर्षों तक दूसरी पद्धतियों के सामने बढ़ने नहीं दिया गया, धीरे–धीरे उसकी आवश्यकता को समझा जाने लगा। आजादी की लड़ाई के दिनों में देश के आयुर्वेद विद्वानों ने अपने–अपने क्षेत्र में बढ़–चढ़ कर भाग लिया। महात्मा गांधी ने कांग्रेस अधिवेशन में यह घोषणा कर दी कि देश के स्वतन्त्र होने पर राष्ट्रभाषा हिन्दी एवं राष्ट्रिय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद होगी।

आज भारत में 200 से अधिक आयुर्वेदिक कॉलेज और 30 से अधिक आयुर्वेद स्नातकोत्तर शिक्षण संस्थान प्रारम्भ हो गए हैं। अनेक चिकित्सालय खुले और खुलते जा रहे हैं। केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद् का गठन, केन्द्रीय अनुसन्धान परिषद् का निर्माण यहां तक कि राष्ट्रिय आयुर्वेद विद्यापीठ का गठन भी हो गया है। देश में ही नहीं विदेशों में भी आयुर्वेद को सम्मान मिल रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के पारम्परिक चिकित्सा पद्धति के रूप में सभी को स्वास्थ्य प्रदान करने के कार्यक्रम में आयुर्वेद को मान्यता प्रदान की है। किन्तु देश की सरकार ने आयुर्वेद को राष्ट्रिय चिकित्सा पद्धति घोषित नहीं किया है।[8]

प्राचीन काल के विकसित आयुर्वेद का विकास, मध्यकाल में अनेक आक्रमणों के कारण मन्द हो गया, धीरे–धीरे फिर चेतना का प्रसार हुआ, जनता की मांग

बढ़ी, लोग आयुर्वेद के अध्ययन–अध्यापन में रुचि लेने लगे और अनेक कष्टों को झेलने के बाद भी आयुर्वेद परम्परा आज तक बनी रही। इसके बने रहने के मुख्य धारण हैं।

1. विकास परम्परा क्रम
2. अध्ययन–अध्यापन व्यवस्था
3. अनुसंधान कार्य
4. राज्याश्रयता
5. केन्द्रीय परिषद् की स्थापना
6. केन्द्रीय सरकार का इस ओर रुझान
7. प्रान्तीय सरकारों का कर्त्तव्य

केन्द्र में समय–समय पर चुने गए स्वास्थ्य मंत्रियों ने इस विज्ञान की उपेक्षा तो नहीं की किन्तु विशेष समर्थन भी नहीं किया। पूर्व प्रधान मंत्री श्री नरसिंह राव ने आयुर्वेद का स्वतन्त्र विभाग प्रारम्भ किया जो वर्तमान में आयुष विभाग के नाम से कार्य कर रहा है।

आयुर्वेद को और अधिक विकसित करने के लिए सभी को मिलकर प्रयास करने की आवश्यकता है।

पाश्चात्य आधुनिक निदान एवं चिकित्सा की विधियों और औषधियों का समावेश अब आयुर्वेदीय शिक्षा में भी प्रारम्भ हो गया है। जिससे नवीन स्नातक एलोपैथी विधियों की जानकारी प्राप्त करने लगे हैं तथा साथ ही अनुसंधान कार्यों में भी उनकी रुचि बढ़ी है।

आधुनिक काल में आयुर्वेद के विकास में पत्र–पत्रिकाओं का विशेष सहयोग रहा है। इनके सहारे अनेक विद्वानों के विचार सामने आये। हिन्दी का सर्वप्रथम मासिक पत्र 'आरोग्य सुधा निधि' पं. नारायण शर्मा वैद्य के सम्पादकत्व में कलकत्ता से सन् 1901 में प्रकाशित हुए।[9] इसके अतिरिक्त आयुर्वेद प्रचारक, धन्वन्तरि,

आयुर्वेद सन्देश, आरोग्य दर्पण, आयुर्वेद संदेश, आयुर्वेद संसार आदि पत्र भी प्रकाशित होते रहे। वर्तमान में आयुर्वेद की पत्र–पत्रिकाओं की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। आरोग्यधाम, निरोगधाम, निरोग, आरोग्य पथ, ऋतुचर्या, वैद्यराज, योग संदेश, निरामय आदि अनेक पत्रिकाएँ आयुर्वेद के प्रति जन सामान्य में जागरूकता लाने में सफल रही हैं और अब दिन–प्रतिदिन आयुर्वेद के प्रति भारतीयों का विश्वास दृढ़ होता जा रहा है।

हमारी प्राचीन चिकित्सा पद्धति को जन–जन तक पहुँचाने का श्रेय बाबा रामदेव को भी जाता है। आधुनिक युग में अपनी बात को दूसरों तक पहुँचाने का सबसे सशक्त माध्यम दूरदर्शन है। बाबा रामदेव ने दूरदर्शन के माध्यम से पूरे भारत को आयुर्वेद एवं योग से परिचित करवाया।

भारतीय संस्कृति में जीवन का उद्देश्य पुरुषार्थ चतुष्ट्य के मार्ग का अनुसरण करते हुए मोक्ष प्राप्त करना है। धार्मिक क्षेत्र के साथ चिकित्सा विज्ञान का भी इसी की प्राप्ति के लिए पृथ्वी पर अवतरण हुआ था। अतः आयुर्वेद पुरुषार्थ चतुष्ट्य की पूर्ति करवाने वाला है क्योंकि स्वस्थ शरीर द्वारा ही मनुष्य धर्म, अर्थ, काम के मार्ग को पूर्ण करके मोक्ष प्राप्ति तक पहुँच सकता है।

संदर्भ

1. अ.ह्. सू. 1
2. च. सं. सू. 24
3. आयुर्वेद का परिचयात्मक इतिहास, आचार्य ताराचन्द्र शर्मा, पृ. 193
4. वही, पृ. 201
5. वही, पृ. 203
6. वही, पृ. 208
7. वही, पृ. 211
8. वही, पृ. 240
9. वही, पृ. 284